चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
1st OCT '51
6

किसी समय कलिङ्ग पर सात्विक नामक राजा राज करता था। वह भगवान जगन्नाथ का बड़ा भक्त था। राज के काम में दिन-रात डूबे रहने पर भी वह रोज पूजा के समय मन्त्रियों और सामन्तों को साथ लेकर पैदल ही भगवान के मन्दिर में जाता। पूजा होने के बाद भगवान के दर्शन करके पुजारियों का दिया हुआ प्रसाद लेकर वह लौट जाता। इस तरह बहुत दिन बीत गए। एक दिन राजा जब रोज की तरह मन्दिर में आया तो एक पुजारी ने निवेदन किया-"महाराज ! आज भगवान की पूजा, नैवेद्य और नीराजन में कुछ देर लगेगी । इसलिए आप तब तक मण्डप में विराजें!" पुजारी की बात सुन कर राजा मन्त्रियों और सामन्तों के साथ मण्डप में चला गया। उस समय वहाँ कुछ यात्री जुआ खेल रहे थे।

"महाराज आ रहे हैं ! तुम लोग किसी दूसरी जगह चले जाओ !" यह कह कर पुजारी ने उन को दूर भगाना चाहा। लेकिन राजा ने रोक कर कहा-"नहीं, नहीं, रहने दो ! ये हमारा क्या बिगाड़ते हैं ?" जुआरी दाँव लगाते और पाँसा फेंकते जाते थे। कभी कोई जीतता ; कभी कोई हारता। जो जीतता उसका चेहरा खुशी से खिल जाता। हारने वाले का चेहरा उदासी से लटक जाता। राजा यह तमाशा देखता हुआ बहुत देर तक वैसे ही खड़ा रह गया। कुछ देर तक इसी तरह देखते रहने के बाद उसके मन में हुआ-'चलो ! हम भी एक हाथ खेल लें !" मन्त्री, सेनापति और पुरोहित को भी खेल में लगा कर राजा पासा फेंकने लगा।

थोड़ी देर में उसका मन खेल में इतना मग्न हो गया कि उसे देवता के दर्शन की बात ही भूल गई। उधर पूजा पूरी हो गई। द्वार खुल गया था। खबर आई कि राजा भगवान के दर्शन करने आ सकते हैं। लेकिन राजा जुआ खेलने में इतना तन्मय हो गया था कि उसने कुछ सुना ही नहीं। कान में कुछ गया भी तो उस पर कोई ध्यान न दिया। देवता का प्रसाद पहले राजा को दिया जाता था। पीछे सब भक्तों को बाँटा जाता था। इसलिए जब राजा के आने में देर हुई तो औरों को भी ठहरना पड़ा।

आखिर एक पुजारी प्रसाद लेकर मण्डप में राजा के पास गया और कहा-"महाराज ! भगवान का प्रसाद ले लीजिए!" उस समय राजा के दाएँ हाथ में पाँसा था । इसलिए उसने पुजारी की ओर देखे बिना ही अपना बाँया हाथ पसार दिया। यह देख कर पुजारी भौंचक्का रह गया। वह जानता था कि बाएँ हाथ में प्रसाद लेना देवता के लिए महापराध होगा। यह सोच कर वह प्रसाद दिए बिना ही चला गया। करीब एक घण्टे बाद जब खेल खतम हो गया तो राजा को प्रसाद की बात याद आई। उसने पूछा-"मन्त्री ! क्या अभी तक पूजा खतम नहीं हुई ? अभी तक मन्दिर के पट नहीं खुले ?" मन्त्रियों ने डरते डरते सब कुछ निवेदन कर दिया।

हठात् राजा मानों एक स्वप्न से जागा। वह सिर पीट कर शोक करने लगा-"हाय ! मैंने कितना बड़ा पाप किया ? भगवान का प्रसाद पाने आकर मन्दिर में जुआ खेलने लग गया ! जैसे कोई अमृत पीने आकर शराब पी लें ! हाय ! इस पाप का अब क्या फल भोगना होगा !" राजा को इस तरह शोक-मग्न देख कर सब

लोग स्तब्ध रह गए। आखिर मन्त्रियों ने सान्त्वना देते हुए कहा-"महाराज ! हमारे भगवान दयालु हैं। वे इस छोटे से अपराध को जरूर क्षमा कर देंगे। चलिए ! उनका दर्शन कर प्रसाद पा लें।" इस तरह समझा कर वे उसे भगवान के समक्ष ले गए। भगवान के दर्शन करके राजा ने प्रसाद पा तो लिया। लेकिन उसके हृदय की हलचल शान्त न हुई। उसके मन का उद्वेग बढ़ता ही गया मानों उसके हृदय में कोई ज्वालामुखी जल रहा हो। उसकी आँखों के सामने पाँसे साँपों की तरह झलमलाते हुए बारम्बार नाचने लगे। उसका महापाप हृदय में बारम्बार हथौड़े की तरह चोट करने लगा। उसे फिर फिर याद आने लगा कि कैसे उसने जुए में होश-हवास खोकर भगवान का प्रसाद लेने के लिए बाँया हाथ फैला दिया था। राजा को अपने आप से घोर घृणा हो गई। उसने सोचा-"जिस बाँए हाथ के द्वारा भगवान का इतना बड़ा अपमान हुआ उसे काट कर फेंक देना ही ठीक होगा।" उसका निश्चय पक्का हो गया। लेकिन अपना हाथ वह स्वयं तो नहीं काट सकता था।

इसलिए उसने एक उपाय सोचा। एक दिन रात के समय उसने मन्त्री को अपने शयनागार में बुला कर कहा-"मन्त्री ! इधर कुछ दिनों से रोज आधी रात के वक्त एक भूत आता है और इस खिड़की में से हाथ डाल कर मुझे बहुत तङ्ग करता है। किसी तरह उससे मेरा पिण्ड छुड़ाओ। आज मैं दूसरे कमरे में सोऊँगा। तुम इसी कमरे में रहो और जाग कर पहरा दो। ज्यों ही वह भूत खिड़की में से हाथ डाले, झट उस पर तलवार का वार कर देना !" यह कह कर राजा मन्त्री को वहीं छोड़ कर बगल के कमरे में चला गया। मन्त्री ने राजा की बात

को सच समझा। इसलिए वह नङ्गी तलवार हाथ में लेकर पहरा देने लगा। आधी रात हुई। सहसा खिड़की में से किसी ने हाथ डाला। मन्त्री ने देखा और फुर्ती से तलवार उठा कर उस पर वार कर दिया। तलवार का वार होते ही हाथ कट कर कमरे में गिर पड़ा। मन्त्री को कुतूहल हुआ कि भूत का हाथ कैसा होता है ? हाथ देखते ही वह चौंका और झाँक कर बाहर देखा। पर कटे जटायु की तरह राजा वहाँ मूर्छित पड़ा हुआ था। मन्त्री खिड़की से कूद कर राजा के पास पहुँचा और उसे होश में लाने की कोशिश करने लगा। वह अपना सिर पीट कर कह रहा था-"महाराज ! आज आपने यह क्या अनर्थ कर दिया ? मेरे हाथ से यह भयङ्कर काम क्यों कराया ? हाय ! अब मैं आपको और दुनिया को कैसे मुँह दिखाऊँ ?" तब राजा ने अपनी पीड़ा छिपा कर मुसकुराते हुए कहा-"भई ! तुमने कोई अपराध नहीं किया। तुमने तो मेरा बड़ा भारी उपकार किया है। समझ लो, भगवान ने ही इस रूप में मेरे पाप का दण्ड दिया।" यह कह कर राजा जगन्नाथ की स्तुति करने लगा। मन्त्री पागल की तरह अपने बाल नोचने लगा। थोड़ी ही देर में सब लोग वहाँ जमा हो गए। राजा ने जो कुछ हुआ था सच सच उन्हें बता दिया। तुरन्त लोगों ने राजा के कटे हुए बाएँ हाथ को एक सवारी में रख कर गाने-बाजे के साथ जुलूस निकाला। दूसरे दिन राजा सब के साथ जगन्नाथ के मन्दिर के पास गया। बहुत लोगों ने कहा कि वह अन्दर जाए। लेकिन उसने न सुना। उसने कहा- "मैंने भगवान के दरबार में अपराध किया है। इसलिए मैं मन्दिर में प्रवेश करने के योग्य नहीं। मैंने अपने पापों के प्रायश्चित्त-स्वरूप हाथ काट डाला। आप

इस हाथ को भगवान के सामने ले जाकर रख दीजिए। जब तक भगवान की आज्ञा न होगी मैं मन्दिर में प्रवेश न करूँगा।" राजा की आज्ञा के अनुसार वह कटा हुआ हाथ भगवान के सामने रख दिया गया। पुजारियों ने रोज की तरह पूजा की और नैवेद्य-निवेदन किया। अन्त में वे भगवान का प्रसाद राजा को देने आए। महाराज ने अपनी आदत के मुताबिक दोनों हाथ जोड़ कर अञ्जली में प्रसाद लेना चाहा। लेकिन कटी हुई बाँह सिर्फ़ उठ कर रह गई । यह देख कर सब के हृदय से विषाद का स्त्रोत बह चला और सबकी आँखें छलछला आईं। लेकिन यह क्या ? यह कैसा महाश्चर्य ? उनके देखते ही देखते राजा का बाँया हाथ बढ़ने लगा और ठीक पहले जैसा हो गया। राजा ने रोज की तरह दोनों हाथों में प्रसाद लिया। यह देख कर वहाँ जितने भक्त और पुजारी थे सब के सब आश्चर्य चकित रह गए। उन्होंने कहा-"महाराज ! भगवान आपको दण्ड देंगे ? देखिए न, आपके ऊपर वे कितने प्रसन्न हैं !" थोडी देर बाद पुजारियों ने अन्दर जाकर देखा तो उन्हें एक और अनहोनी बात दिखाई दी। उन्होंने कटा हुआ जो हाथ भगवान के सामने रख दिया था उस में से दिव्य सुगन्ध आ रही थी। कपडा हटा कर देखा तो हाथ के बदले सुगन्धित जड़ी बूटियाँ पड़ी थीं। वे जड़ी-बूटियाँ मन्दिर के अहाते में गाड़ दी गईं। धीरे धीरे वे बूटियाँ मन्दिर के सारे अहाते में फैल गईं। दूर दूर से भक्त लोग आते और एक एक

पौधा अपने साथ ले जाते। इस तरह सारे देश में बूटियाँ पाई जाने लगीं। उसी बूटी का नाम 'दवन' है। आज भी जगन्नाथ की पूजा में इस पौधे का बड़ा महत्व है।
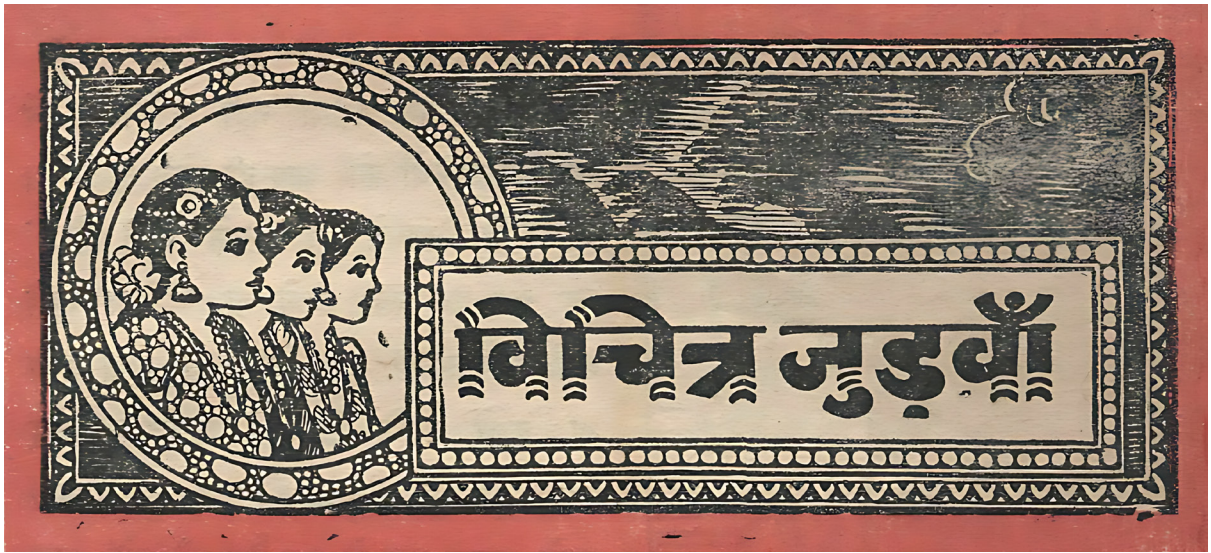
यह कठोर समाचार कान में पड़ते ही रानी पत्थर की तरह खड़ी रह गई। तब राजा डर गया कि कहीं वह बेटियों के साथ साथ रानी को भी न गँवा बैठे। उसने सिर पीटते हुए कहा-"जिस तरह मैंने तीन साल तक हठपूर्वक उन्हें सुरङ्ग-महल से बाहर नहीं आने दिया था। उसी तरह और एक दिन उन्हें उसी में रखता तो क्या बिगड़ जाता? तब तो यह सङ्कट न आता। मैं कितना पापी हूँ कि अपनी लाड़ली बेटियों को गिद्धों के हवाले कर चुपचाप खड़ा देखता रहा?

हाय! अब क्या रानी भी नहीं बचेगी?" सारे महल में मातम छा गया। जब घण्टों बीत जाने पर भी रानी को होश न आया तो सब उसके जीने की आशा छोड़ बैठे। इतने में राज-वैद्य वहाँ आया। उसने तरह तरह की दवाइयाँ दी। आखिर किसी तरह रानी को होश आया। तब सबके चेहरों पर फिर आनन्द झलकने लगा। लेकिन उनका आनन्द ज्यादा देर तक न रह सका। क्योंकि रानी को होश तो आया; लेकिन शोक के आघात से उसका दिमाग बिगड़ गया। "मेरी

लड़कियाँ कहाँ हैं ? बताओ, तुम सबने उन्हें कहाँ छिपा रखा है ?" यों पगली की तरह वह कुछ का कुछ बकने लगी। "क्या तुम समझती हो कि मैं अब भी तुमसे कुछ छिपा रहा हूँ ? मेरी बात पर भरोसा करो। मैंने लड़कियों को कहीं नहीं छिपाया है। उन्हें गिद्ध उठा ले गए हैं। अगर तुम्हें अब भी मेरी बात पर विश्वास नहीं होता है तो पूछ लो इन सब नौकरों से !" राजा ने दीनता के साथ कहा। लेकिन रानी की हालत ऐसी न थी कि वह उसकी बातें सुनती या समझती। "तुम सब एक हो। तुम पर भरोसा नहीं करूँगी। मैं अपनी लड़कियों को आप ही खोज लाऊँगी। जाओ मेरे सामने से ! मुझे जाने दो!" यह कह कर रानी उठने की कोशिश करने लगी। एक तो खुद शोक में डूबा हुआ था, दूसरे उसके सिर पर आफत का यह पहाड़ टूट पड़ा। राजा को कुछ न सूझा। उसने करुण-भाव से राज-वैद्य की ओर देखा जैसे कहता हो कि क्या आप मेरी कुछ मदद नहीं कर सकते ? राज-वैद्य ने सोच-विचार कर और एक दवा दी जिससे रानी की बकवास बन्द हो गई और वह उदास मन से चुपचाप पड़ी रही।

तब राज-वैद्य ने राजा को एकान्त में ले जाकर कहा-"महाराज ! अब रानी जी की देह में कोई बीमारी नहीं है। सारी बीमारी तो उनके मन में है। इसका एक ही इलाज है। वह है लड़कियों को खोज-ढूँढ कर ले आना। यह काम जितनी जल्दी होगा उतनी ही जल्दी रानी चङ्गी हो जाएँगी। इसलिए आप बाकी सब काम छोड़ कर पहले लड़कियों की खोज करवाइए ! आप इस बारे में जो करना हो

कीजिए । बाकी बातें मैं देख लूँगा।" उसने राजा को ढाढ़स बँधाते हुए कहा। "अच्छा ! मैं इस विषय में कोई कसर न होने दूँगा। अभी जाकर सारे राज में ढिँढोरा पिटवाता हूँ। आप रानी की देख-भाल कीजिए।" यह कह कर राजा चला गया। राजा ने तुरन्त अपने सब सिपाहियों को राज में चारों ओर ढूँढ़ने के लिए भेज दिया। साथ ही साथ उसने यह घोषणा कर दी कि जो उसकी लड़कियों को ढूँढ लाएगा उसे अपना आधा राज भी दे देगा।

धीरे धीरे हफ्ते-महीने बीत गए। लेकिन जो सिपाही लड़कियों को ढूँढ़ने गए थे उनमें से एक भी लौट कर न आया। कोई भी ऐसा वीर आगे न आया जो घोषणा के अनुसार आधा राज पाने के लिए राजकुमारियों की खोज में जाए। यह सब देख कर राजा भी बावला सा हो गया। उधर रानी की हालत में भी कोई सुधार न हुआ। एक दिन तड़के राजा अपने महल की तिमञ्जीली छत पर टहल रहा था। इतने में धुन्धली रोशनी में उसे दूर से तीन शकलें अपने महल

की ओर आती दिखाई दीं। वे तीन लड़के थे, जो लम्बाई-चौड़ाई, शक्ल-सूरत में उतनी दूर से भी एक साँचे में ढले से जान पड़ते थे। उन्हें देख कर पहले तो राजा के मन में बड़ी आशा हुई। उसने सोचा, शायद वे उसकी लड़कियाँ ही हों। इसलिए राजा जल्दी जल्दी नीचे उतर कर उनकी तरफ़ दौड़ा। लेकिन नजदीक जाने पर उसे मालूम हुआ कि वे तो लड़के हैं। उसे बड़ी निराशा हुई। लेकिन उसे यह देख कर बड़ा आश्चर्य भी हुआ कि वे तीनों देखने में बिलकुल एक से लगते हैं। तब उसने सोचा-"कहीं मेरी लड़कियाँ ही दुष्ट-शक्तियों के प्रभाव से लड़के तो नहीं बन गईं ?" वह उनकी तरफ गौर से देखने लगा।

राजा के चेहरे पर आशा-निराशा की हलचलों को देख कर तीनों लड़के उसकी ओर देखते रह गए। आखिर राजा अपना कुतूहल न रोक सका। उसने पूछा-"लड़को ! तुम कौन हो ? किस गाँव के हो ? इस तरह क्यों आए हो ?" वे लड़के यह जान न पाए कि उनसे ये सब प्रश्न करने वाला खुद उस देश का राजा ही है। क्योंकि राजा अपनी पोशाक में न था। तिस पर उसके चेहरे पर हवाइयाँ भी उड़ रही थीं। वह राजा होने पर भी उस क्षण देखने में एक मामूली आदमी सा लग रहा था। खैर, राजा हो या रङ्क ! उन्हें उसके सवाल का जवाब तो देना ही था। इसलिए लड़कों ने कहा-"हम यहाँ से दक्षिण की ओर भद्रपुर के रहने वाले हैं। इस देश के राजा

की घोषणा सुन कर यहाँ आए हैं।" "ओह, ऐसी बात है ! अच्छा तो चलो ! मैं तुम्हें राजा के यहाँ ले चलता हूँ। मुझे भी वहाँ कुछ काम है।" यह कह कर राजा अपने साथ उन्हें महल की तरफ ले चला। महल में उसने तीनों को तीन आसनों पर बिठलाया और खुद जाकर सिंहासन पर बैठा। "हाँ ! अब बताओ ! लड़को ! राजा से तुम्हारा क्या काम है ?" यह पूछते हुए उसने मुकुट अपने सिर पर पहन लिया।

यह देख कर उन लड़कों में से एक ने आश्चर्य के साथ उठ कर राजा को नमस्कार किया और कहा-"अच्छा, तो आप ही राजा हैं ?" तब बाकी दोनों ने भी उठ कर राजा को नमस्कार किया। "हाँ, लड़को ! तुम जिस अभागे राजा को देखने आए हो, वह मैं ही हूँ। तुम मुझे पहचान नहीं पाए तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं। आजकल मेरी हालत ही ऐसी हो गई है। हाँ, अब तुम मुझे अपनी कहानी सुनाओ !" राजा ने पूछा। तब उनमें से एक ने कहना शुरू किया-"महाराज ! हम तीनों भद्रपुर की रहने वाली एक गरीबन के लड़के हैं। मेरा नाम उजेरा है । इसका नाम अँधेरा है। उसका नाम साँझ है।" यह कह कर उसने बाकी दोनों की ओर दिखाया। यह सुन कर राजा को अचरज भी हुआ और हँसी भी आई। उसने कहा-"क्या ? अँधेरा, उजेरा और साँझ ? बड़े विचित्र नाम हैं ! क्या ऐसे नाम रखने की कोई खास वजह है ?" तब उजेरा ने कहा-"हुजूर ! हम तीनों अपनी माता की कोख से एक ही दिन कुछ घण्टों के अन्तर में पैदा हुए। पहला साँझ को पैदा हुआ। दूसरा आधी रात को। मैं
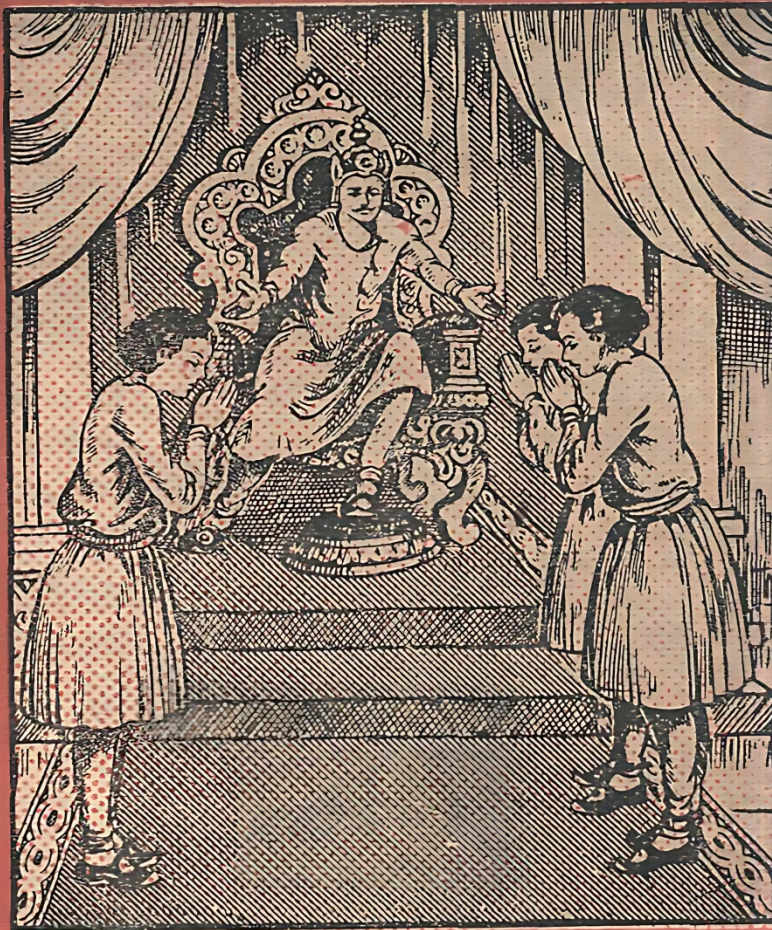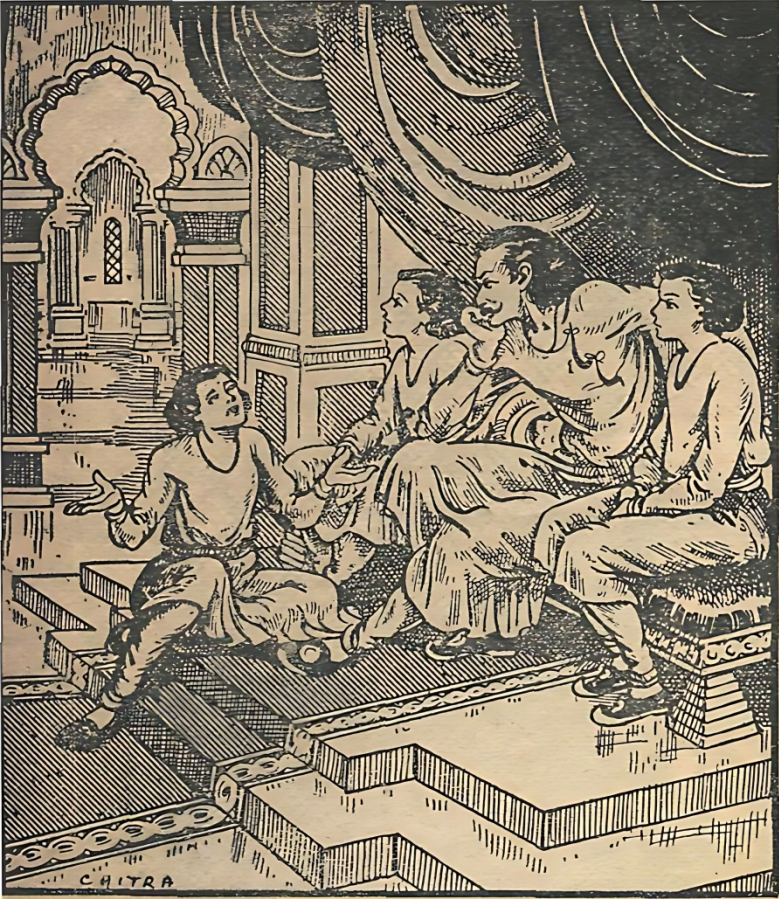
सबेरे। हम तीनों की सूरत-शकल भी एक सी देख कर माँ ने सोचा कि क्या नाम रखे जाएँ ? आखिर उसने सोच कर हम जिस जिस वेला में पैदा हुए वैसे वैसे नाम रख दिए। यह सुन कर राजा ने कहा-"वाह ! यह अच्छी रही ! तो तुम तीनों जुड़वें बच्चे हो ! कैसा गजब है ? मेरी लड़कियाँ भी जुडवीं हैं। इस तरह जुड़वों को खोजने के लिए जुडवों के आने में भगवान का हाथ मालूम होता है।" यह कह कर उसनेलड़कों को अपनी बगल में बिठा कर पूछा-"तो तुम घर से निकलते वक्त माँ से कह आए थे ?" "कहा क्यों नहीं ? हम तो अपनी माँ से कहे बिना कोई काम नहीं करते। उनकी इजाजत के बाद ही हम घर से निकले। अब शायद आप पूछेंगे कि घर पर बूढ़ी माँ को अकेली छोड़ कर तीनों कैसे चले आए ? इसका एक कारण है। सुनिए - हम लोग न जाने किस मुहूर्त में जनमे थे कि हममें कुछ अजीब कमजोरियाँ हैं। साँझ को ज्यादा रोशनी या घने अँधेरे में साफ नहीं दिखाई पड़ता। यह साँझ के वक्त जब तक रात गहरी नहीं हो जाती, तब तक ही देख सकता है । इसके पहले या इसके बाद वह अन्धा हो जाता है। अब अँधेरा की बात लीजिए- वह रोशनी बिलकुल नहीं सह सकता। इसलिए रातों में ही उसे ज्यादा आराम रहता है। अब मेरे लिए तीखी रोशनी ही चाहिए। तड़के मैं बाहर नहीं निकलता। साँझ होने के पहले ही घर पहुँच जाता हूँ। इन कमजोरियों के कारण हम तीनों एक दूसरे से बिछुड़ते नहीं। इसके अलावा हम जानते हैं कि राजकुमारियों को ढूँढ़ लाना आसान काम

नहीं है। यह काम हम में से कोई अकेले नहीं कर सकता। लेकिन चौबीस घण्टों को तीन हिस्सों में बाँट कर तीनों जून में हम अपना अपना काम अच्छी तरह कर सकते हैं। ऐसा हमने कई बार किया है। अब इन राजकुमारियों को ढूँढ़ लाने के काम में भी अगर हम तीनों मिल कर काम करेंगे तो जरूर सफल होने की आशा है। ऐसा करने पर यह काम हमारे लिए ज्यादा मुश्किल न होगा। यह सोच कर अपनी माँ को अकेली छोड़ कर भी हम तीनों साथ ही यहाँ आए हैं।" य कह कर उसने अपना पूरा हाल सुना दिया। तब राजा ने कहा-"ठीक है। तुम्हारा कहना बेसबब नहीं है। मैं अभी तुम्हारी माँ को यहाँ बुलवा भेजता हूँ। फिर तुम्हें कोई फिक्र न रहेगी। वह भी हमारे साथ महल में रहेगी।"

"इससे बढ़ कर और क्या होगा ?" उन तीनों ने एक स्वर में कहा। राजा ने तुरन्त अपने नौकरों को भेज कर उनकी माता को बुलवा भेजा। राजा की उदारता देख कर वह भी बहुत खुश हुई। राजा ने उस बुढ़िया से कहा-"माँ ! आज तुम्हारे लड़कों के जरिए तुम्हारा सारा हाल मालूम हुआ। इन साहसी पुत्रों को जन्म देकर तुम्हारी कोख भी पावन हो गई।" राजा ने उसके प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की। फिर राजा ने लड़कों की माँ की इजाजत लेकर उनके नाम में थोड़ा सा अदल-बदल किया। तब उनके नाम क्रम से प्रदोष, निशीथ और उदय हो गए। इससे माँ और लड़कों दोनों को खुशी हुई। दूसरे दिन राजा ने लड़कों को तरह तरह के हथियार दिलवाये। फिर वह उन्हें अपने अस्तबल में ले गया और अपने अपने घोड़े चुन लेने को

कहा। अपने नाम के अनुसार ही उदय ने एक ऐसा सफेद घोड़ा लिया जो सूरज की रोशनी की तरह स्वच्छ तेज से दमक रहा था। निशीथ का घोड़ा आबनूस के कुन्दे की तरह चमक रहा था। प्रदोष का घोड़ा साँझ की रोशनी की तरह लाल था। एक शुभ मुहूर्त में उदय अपने सफेद घोड़े पर, निशीथ अपने काले घोड़े पर और प्रदोष अपने लाल घोड़े पर सवार होकर खोई हुई लड़कियों की खोज में चले पड़े। उनके चलने के पहले राजा ने तीन काले झण्डे लाकर तीनों के घोड़ों की कलङ्गियों पर खोंस दिए और कहा-"जब तुम तीनों मेरी लड़कियों को लेकर लौटोगे तो इन झण्ड़ियों को जरूर उतार कर फेंक देना। भूलना नहीं!' उसने उन्हें हिदायत कर दी। उसके बाद राजा और अपनी माँ का हार्दिक आशीर्वाद पाकर तीनों कुमार वायु-वेग से चल पड़े।

[निशीथ और प्रदोष, जिनको दिन की रोशनी में दिखाई नहीं देता था, उदय के साथ कैसे जा सके ? उनकी कोशिशें कहाँ तक सफल हुई ? आदि बातें अगले अङ्क में पढ़िए।]

साकेतपुर नाम के गाँव में सरसी नाम की एक बेवा औरत रहती थी। बेचारी का पति बहुत दिन पहले ही मर गया था। इसलिए वह अनाथ होकर जिन्दगी काट रही थी। उसका पति उसके लिए एक घर और पिछवाडे में एक बाड़ी छोड़ गया था। यही उसकी कुल जायदाद थी। वह अनाथ औरत उस बाड़ी में कुछ न कुछ पैदा करके अपनी गुजर कर लेती थी। किसी तरह उसके दिन कट जाते थे। एक बार सरसी के नातेदारों के घर में किसी लड़की की शादी थी। उन्होंने उसे दस दिन पहले ही लिखा कि तुरन्त आओ और शादी के काम-धाम में जरा मदद करो। रिश्ते-नाते का मामला था। कैसे इनकार करती ? सरसी ने खत देखते ही घर में ताला लगा दिया और पड़ोसिनों से कहा- "अजी ! जरा देख-भाल करती रहना। मैं दस दिन में लौट आऊँगी।" इस तरह घर की रखवाली का काम उन्हें सौंप कर वह बड़े उत्साह से नातेदारों के घर चली गई। वहाँ जाते ही सारा काम उसके सिर पर आ पड़ा। दस दिन में शादी हो गई। मेहमान भी सब जहाँ के तहाँ चले गए। सरसी का काम भी पूरा हो गया था। इसलिए उसने अपने आँचल की गाँठ से चार रुपए निकाल कर वधू के हाथ में रख दिए और आशीर्वाद देकर सब से विदा ली और अपने गाँव लौट आई। वहाँ आकर उसने घर का ताला खोला। सब चीजें जहाँ की तहाँ पड़ी हुई थीं ! लेकिन जब उसने बाड़ी में जाकर देखा तो उसके पैरों तले से धरती खिसक गई। बात यह थी कि वह मेड़ जो उसकी बाडी को पिछवाड़े में पड़ोस के एक घर की बाड़ी से अलग करती थी, वैसे ही बीस गज अन्दर खिसक आई थी। "यह कैसा गजब है ?" सरसी ने सोचा और पड़ोसिनों

को बुला कर दिखाया। "अब हम क्या कहें तुमसे ? जब तुम गाँव में नहीं थीं उस समय पटवारी जी ने तुम्हारी बाड़ी की बीस गज जमीन अपनी बाड़ी में मिला ली। उन्होंने पुरानी मेड़ कटवा दी और उसके बदले नई मेड़ बीस गज खिसका कर बनाई। बड़े लोग जो न करें सो थोड़ा ! अब पटवारी जी से कौन लड़ने जाय ?" उन्होंने सच्ची बात बता दी। "और तुम सब खड़ी खड़ी देखती रहीं ?" सरसी ने पूछा। "हाय ! हम क्या कर सकती हैं ? गाँव में किसकी मजाल है जो पटवारी के सामने सर उठाए ? जल में रह कर मगर से वैर ?" उन्होंने जवाब दिया।

सरसी ने सीधे पटवारी की स्त्री के पास जाकर अपना दुखड़ा रोया। लेकिन उसने कहा-"मैं मरदों के काम में दखल नहीं डाल सकती।" इस तरह उसने जल्दी ही पिण्ड छुड़ा लिया। तब सरसी ने गाँव के एक अमीर आदमी से जाकर कहा। उसने सारी बात सुन कर कहा-"पटवारी बड़ा जालिम है। लेकिन क्या किया जाय ? उसके बिना हमारा काम एक दिन भी नहीं चल सकता।" इस तरह उसने भी अपनी बला टाली। तब सरसी को निश्चय हो गया कि गाँव वालों में कोई उसकी मदद नहीं करेगा। उसने रिश्तेदारों को खत लिखे। लेकिन उन्होंने जवाब में लिखा-"जो काम गाँव वालों से नहीं हो सका, वह हम लोग आकर क्या कर सकते हैं ? इसलिए तुम किसी न किसी तरह गाँव वालों को ही राजी करो।" तब सरसी ने सोचा कि अपनी गरज पड़ने पर सब लोग खुशामद करके काम निकाल लेते हैं। लेकिन जरूरत पड़ने पर कोई मदद करने वाला नहीं। यह सोच कर वह चुप्पी साध गई। इतने में बरसात के दिन आ गए। पटवारी ने अपनी बाड़ी में और जबर्दस्ती छीनी हुई सरसी की जमीन में

नारियल लगाने का इरादा करके गढ़े खुदवा रखे। एक दिन जब वह उन गढ़ों को देखने बाहर निकला तो उसी समय सरसी भी एक बोरा लेकर अपनी बाड़ी में आई। उसने नई बनाई हुई मेड़ के पास आकर पुकारा-"पटवारी जी !" पटवारी जी उसके मुँह से अपना नाम सुनते ही चौंक पड़े। वे मन ही मन डरने लगे कि अब न जाने यह क्या क्या कोसने और गाली-गलौज करने लगे। क्योंकि उन्होंने उसकी जमीन अपनी बाड़ी में मिला ली थी। लेकिन जब उन्होंने देखा कि सरसी बिलकुल गुस्से में नहीं है तो उन्हें दिलासा हुआ। सरसी ने उन्हें कहा-सुना कुछ भी नहीं। उसने सिर्फ इतना कहा-"क्यारियों में डालने के लिए मुझे एक बोरा मिट्टी चाहिए। क्या मैं उस ढेर में ले लूँ ?" तब पटवारी ने सोचा-"मैंने इसकी बीस गज जमीन हड़प ली है। फिर इसे एक बोरा भर मिट्टी देने में क्या हर्ज है ? बेचारी ने मिट्टी ही तो माँगी है ? इसने जमीन के बारे में तो बखेड़ा उठाया ही नहीं। पहले मुझे तो बड़ा डर लगता था।" यह सोच कर उन्होंने कहा-"ले लो, जितनी मिट्टी चाहो ले लो ! मिट्टी में क्या रखा है ?

अरे ! इसके लिए भी पूछने की जरूरत है ?"

तब सरसी ने पटवारी की बाड़ी में आकर बोरे में मिट्टी भर ली और कहा-"पटवारी जी ! मैं अकेली इसे नहीं उठा सकती । जरा आप इसे उठा कर मेरे सिर पर रख देंगे ?" यह सुन कर पहले तो पटवारी को बड़ा गुस्सा आया। "मैं पटवारी हूँ। क्या तूने मुझे अपना नौकर समझ रखा है ?" उसने कहना चाहा। लेकिन फिर तुरन्त सोचा-"बेवा औरत है। जरा उठा ही दूँ तो क्या हर्ज है ? तिस पर इसको शान्त रखने में ही मेरी कुशल है। इससे नाहक झगड़ा करना ठीक नहीं।" यह सोच कर वे बोरा उठाने के

लिए तैयार हो गए। तैयार तो वे हो गए; लेकिन वह बोरा उनके उठाए न उठा। उनके मोटे-ताजे बदन में मिट्टी का बोरा उठाने की ताकत न थी। "मैं अकेले यह बोरा उठा नहीं सकता। जाकर किसी और को बुला लाओ !" उन्होंने थोड़ा झुञ्झला कर कहा। तुरन्त सरसी बाहर गई और आस-पड़ोस के रहने वालों को बुला लाई। वे लोग सोचने लगे कि माजरा क्या है ? तब उसने कहना शुरू किया-"लोगो ! सुनो कान खोल कर ! जब मैंने पटवारी जी से कहा कि जरा मिट्टी का बोरा उठा कर मेरे सिर पर रख दीजिए तो इन्होंने कहा-'यह काम अकेले मुझसे नहीं हो सकता ! किसी और को बुला लाओ !' जो बेचारा एक बोरा मिट्टी नहीं उठा सकता, वह बीस गज जमीन की मिट्टी हड़प लेने के पाप का बोझ कैसे उठा सकेगा ? कल जब यमदूत आकर पूछेगा तो ये क्या जवाब देंगे ? जरा तुम्हीं सब पूछ लो इन भले आदमी से !"

विधवा की ये बातें सुनते ही पटवारी तिलमिला उठा। एक पल भी वहाँ न रह सका। सिर झुका कर चला गया। आश्चर्य ! दूसरे दिन वह मेड़ फिर अपनी पुरानी जगह पर चली गई। सरसी की बाड़ी में बिना खर्च के खुदाई भी हो गई थी। उसने पटवारी द्वारा खुदवाए हुए गढ़ों में नारियल के पेड़ लगा दिए। पटवारी ने फिर कभी उसको कोई तकलीफ न दी।

शान्ति से और समझ-बूझ कर काम करने का फल कितना अच्छा होता है ! अगर वह विधवा औरत गुस्से में आ जाती और गाली-गलौज करने लगती तो जमीन तो खो ही चुकी थी ! सारी जिन्दगी के लिए काँटा बो लेती। पटवारी उसे कभी सुख की नींद सोने नहीं देता। इससे हमें यह उपदेश मिलता है कि सङ्कट आने पर कभी घबराना नहीं चाहिए। बल्कि धीरज तथा समझदारी से काम लेना चाहिए।
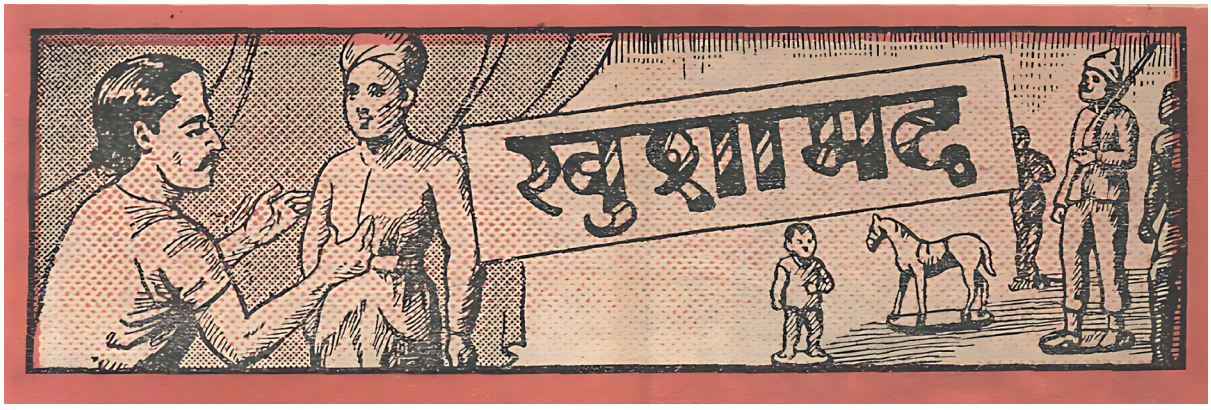
शाम्बरी नगर में चतुर नाम का एक मूर्तिकार रहता था। मूर्तिकार माने मूर्तियाँ बनाने वाला। चतुर की बनाई हुई मूर्तियाँ देखने से ऐसा मालूम होता था मानों वे अब बोलीं ! अब बोलीं ! उनकी आँखें देख रही हैं ! उनका दिल धड़क रहा है ! कभी कभी वह मूर्तियों के अन्दर कलपुर्जे भी रख देता था जिसके बल से वे मूर्तियाँ उठने-बैठने और हाथ-पैर हिलाने-डुलाने लग जाती थीं। कुछ लोग यह देख कर भ्रम में पड़ जाते और उनसे बातें भी करने लगते थे। अमीर लोग उससे सिपाहियों की मूर्तियाँ बनवा कर अपने महलों के सामने रखवाली करने के लिए रख देते थे। जब कभी चोर घर में आते और उन सिपाहियों को देखते तो सचमुच ही डर कर भाग जाते थे। ऐसी करामात थी चतुर की कारीगरी में। इस तरह की अजीब मूर्तियों का दाम बहुत मिल सकता था। चतुर चाहता तो कुछ ही दिनों में माला-माल बन जाता। लेकिन ऐसा कुछ न हुआ। वजह यह थी कि चतुर बड़ा खुशामद-पसन्द आदमी था। अपनी तारीफ सुन कर वह फूला न समाता था। जब लोग आकर उसकी कारीगरी की बड़ाई करने लगते तो वह ऐसा खुश होता कि उन्हें मुफ्त में ही वे मूर्तियाँ दे देता था। कुछ दिन बाद लोग उसकी कमजोरी जान गए। अब किसी का मन किसी मूर्ति पर चल जाता तो झट वह उस का गुणगान करने लग जाता था। सुनते ही चतुर फूल कर कुप्पा हो जाता और वह उसे दे देता था।

उसी शहर में दीर्घदर्शी नाम का एक ज्योतिषी रहता था । लोग कहा करते थे कि उसके मुँह से जो बात निकलती, कभी झूठी नहीं होती। एक बार चतुर भी उसके पास गया और अपनी जन्म-कुण्डली दिखाई। दीर्घदर्शी

ने उसकी जन्म-कुण्डली ध्यान से देखी और भौंहें सिकोड़ लीं। "पण्डितजी ! यों क्या देख रहे हैं ? क्या बात है ? कुछ बताइए न ?" चतुर ने पूछा। "पीछे बताऊँगा।" यह कह कर ज्योतिषी जब जाने लगा तो चतुर बहुत घबरा गया। उसकी समझ में न आया कि बात क्या है ? चिन्ता के मारे उसने खाना-पीना छोड़ दिया। एक दिन उसके एक मित्र ने ज्योतिषी के पास जाकर कहा-"पण्डितजी ! चतुर चिन्ता के मारे दिन दिन घुलता जा रहा है। अगर उसके ऊपर कोई सङ्कट आने वाला हो तो बता दीजिए न। जिससे कुछ उपाय किया जा सके।" तब ज्योतिषी ने कहा-"ऐ पगले ! उस पर बड़ा भारी सङ्कट आने वाला है। अगली नवमी की रात को एक बज कर सात मिनट पर उसे सावधान रहने को कहो।

"तो पण्डित जी ! ग्रहों की शान्ति, अभिषेक, दान वगैरह करने से क्या कुछ फायदा न होगा ? क्या यह सङ्कट नहीं टलेगा ?" उस आदमी ने पण्डितजी से फिर पूछा। तब ज्योतिषी ने कहा-"क्या संसार में कोई ऐसा वीर है जो मौत को टाल सकता है ? समुन्दर के बीचों-बीच एक ही खम्भे वाला महल बना कर उसमें रहने पर भी परीक्षित महाराज को उसने साँप बन कर डस लिया। फिर मामूली आदमी की बिसात हीं क्या है ?" यह कह कर उसने उसे वहाँ से भेज दिया। उस मित्र ने जाकर चतुर से सारा हाल सुनाया और कहा-"अब तुम शास्त्र-पुराण पढ़ कर परलोक की चिन्ता करो ! लो, इसीलिए मैं तुम्हारे वास्ते रामायण लाया हूँ।" यह कह कर उसे वह रामायण देकर चला गया। उसके जाने के बाद चतुर ने अपनी मौत के बारे में सोचना शुरू किया। उसे बड़ा शोक हुआ। इसी तरह रोते रोते वह सो गया। जब जागा तो उसे एक उपाय सूझ गया।

वह तुरन्त बाजार गया और मूर्तियाँ बनाने के लिए आवश्यक वस्तुएँ बहुत सी खरीद लाया। फिर घर में आकर उसने सब दरवाजे बन्द कर लिए और एक आइने के सामने बैठ कर अपना काम शुरू किया। आइने में अपनी परछाई देख कर उसने ठीक अपने ही जैसी चार मूर्तियाँ बनाईं। उन के अन्दर उसने कल-पुर्जे रखे जिससे वे मूर्तियाँ ठीक उसी की तरह हिलने-डुलने, देखने-सुनने, और चलने-फिरने लगीं। यहाँ तक कि उसने उन मूर्तियों को इस तरह बनाया कि उन्हें कोई नजदीक से देखने पर भी बिलकुल न पहचान सके। ऐसा मालूम होता था कि वे सभी जीती जागती हैं। फिर वह निश्चिन्त होकर बैठ गया। नवमी देखते देखते आ गई। लेकिन चतुर को अब मौत का डर बिलकुल न था। उस दिन रात होते ही उसने पाँच बिस्तर बिछवाए। बीच वाले बिस्तर पर वह खुद लेट गया और अपने अगल-बगल दो दो मूर्तियों को लिटा दिया। फिर वह चादर ओढ़ कर देखने लगा कि अब क्या होने वाला है ? इतने में घड़ी में ग्यारह बज गए। धीरे धीरे बारह भी।
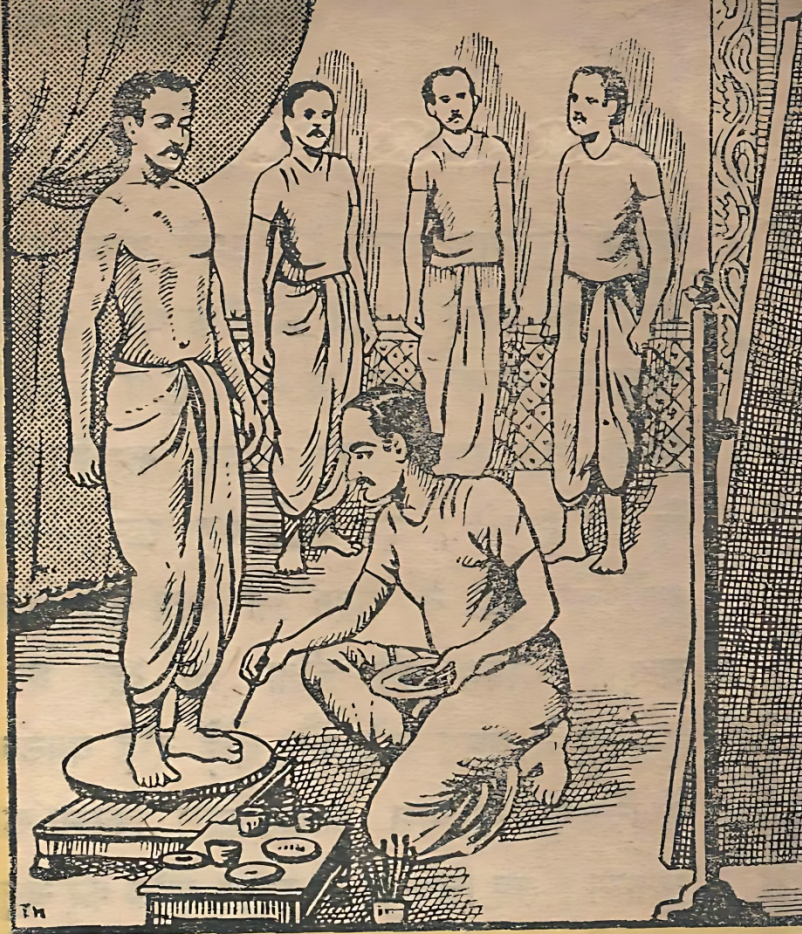
आखिर एक भी बज गया। ठीक उसी समय दो यमदूत उस कमरे में घुस आए। आते ही पाँच खाटों पर लेटी हुई पाँचों सूरतों पर उनकी नजर पड़ी। लेकिन वे पहचान न सके कि उनमें चतुर कौन है ? इस तरह जब दो तीन मिनट बीत गए तो उनमें से एक को अच्छा उपाय सूझ गया। वह मूर्तियों के पास जाकर एक एक को चिकोटी लेने लगा। उसके साथी ने पूछा कि "क्या बात है ? तुम क्यों ऐसा कर रहे हो ?" तब उसने कहा-" कुछ नहीं। चिकौटी काटने से पता चल जाएगा कि कौन हमारा आसामी है। क्योंकि इनमें से जो आदमी होगा उसे दरद होगा और वह चिल्ला उठेगा। अगर नहीं तो थोड़ा सा

हिलेगा-डुलेगा जरूर !" उसने अपनी चाल साथी को बताई। बात तो ठीक थी। लेकिन चतुर पर इसका कुछ असर न हुआ। उसने किसी तरह सारा दरद बर्दाश्त कर लिया। चूँ तक न की। दम साधे पड़ा रहा। यम-दूतों को कुछ न सूझा कि अब क्या किया जाए ? समय भी बीता जा रहा था। इसलिए वे घबरा उठे और दौड़े दौड़े यमलोक में चित्रगुप्त के पास जाकर सारा किस्सा कह सुनाया। तब चित्रगुप्त ने खाता खोल कर चतुर का जीवन-बृत्तान्त देखा। उसमें लिखा था कि वह बड़ा खुशामद-पसन्द है। प्रशंसा सुन कर फूल जाता है। "तुम लोग उसकी खूब तारीफ करो। फिर देखना वह पकड़ा जाता है कि नहीं ?" चित्रगुप्त ने यमदूतों को सलाह दी और भेज दिया। यमदूतों ने फिर चतुर के कमरे में घुस कर जोर से आपस में बातें करना शुरू कर दिया, जिससे उसे भी सुनाई पड़े- "ओह ! यह चतुर कैसा कुशल कलाकार है ? उसने चारों मूर्तियाँ ऐसी बनाई कि किसी में जरा भी फरक नहीं मालूम पड़ता है। हमारा ख्याल था कि सिर्फ विश्वामित्र ने ही ब्रह्मा से होड़ लगाई और एक नई सृष्टि रच डाली। लेकिन यह चतुर तो उससे भी बढ़ गया। चतुर सचमुच बहुत चतुर है !" यह कह कर वे उसकी प्रशंसा का पुल बाँधने लगे।

उनके मुँह से अपनी ऐसी प्रशंसा सुन कर चतुर की खुशी का ठिकाना न रहा। यहाँ तक कि वह ज्यादा देर तक अपनी खुशी को छिपाने में समर्थ न हो सका। आनन्द से उसका चेहरा चमकने लगा और वह मौत की बात भूल गया। उसके होठों पर मुसकुराहट खेलने लगी। "लो पकड़ा गया चोर !" कह कर यम-दूतों ने उछल कर उसके गले में अपना पाश लगा दिया। चतुर की कलात्मक मूर्तियाँ देखती रह गईं। वे क्या करतीं ? आखिर चतुर की कमजोरी उसे ले ही डूबी।

जगन्नाथ-क्षेत्र के नजदीक ही कुण्डबिल्व नाम का एक गाँव था। उस गाँव में एक छोटा सा ग़रीब परिवार रहता था। दो ही व्यक्ति थे। नारायण भट्ट और कमला बाई। भगवान की कृपा से उनका एक लड़का हुआ। उसका नाम जयदेव रखा गया। दोनों उसे प्रेम से पालने लगे। जयदेव बचपन से ही भगवान की बड़ी भक्ति करता था। धीरे धीरे वह बड़ा हुआ और नामी पण्डित हो गया । उसने गीत-गोविन्द नाम का एक रस-पूर्ण काव्य लिखा। इस काव्य के कारण जयदेव की ख्याति देश में चारों ओर फैल गई। उसके गीत चारों ओर बड़े प्रेम से गाए जाने लगे। दूर दूर से लोग जयदेव के दर्शन करने और उसके मुख से गीत-गोविन्द के पद सुनने के लिए आते थे। धीरे धीरे जयदेव का वह गाँव एक महातीर्थ बन गया।

उस गाँव में जाने के लिए जगन्नाथ पुरी होकर ही जाना पड़ता था। उन दिनों उस प्रदेश का राजा था सात्यकि। उस राजा ने जयदेव से ईर्ष्या करके उसकी होड़ में एक दूसरा गीत-गोविन्द लिखा। लेकिन राजा के गीत-गोविन्द को पढ़ने वाला कोई न था। इसलिए उसने अपने राज में घोषणा करा दी कि कोई भी जयदेव का गीत-गोविन्द न पढ़े। सब लोग उसी का गीत-गोविन्द पढ़ें। इस तरह उसने जबर्दस्ती अपनी किताब लोगों के ऊपर लादनी चाही। लेकिन लोगों को तो राजा की वह किताब बिलकुल पसन्द न थी । "गीत-गोविन्द तो जयदेव का ही पढ़ना चाहिए। अहा ! उसमें कैसा रस है ? राजा की किताब में क्या है? भूसा भरा हुआ है ! उसे कौन पढ़ेगा ? पढ़ने वालों को उसमें क्या आनन्द मिलेगा ?" लोग इस तरह आपस में काना-

करुण कुमार
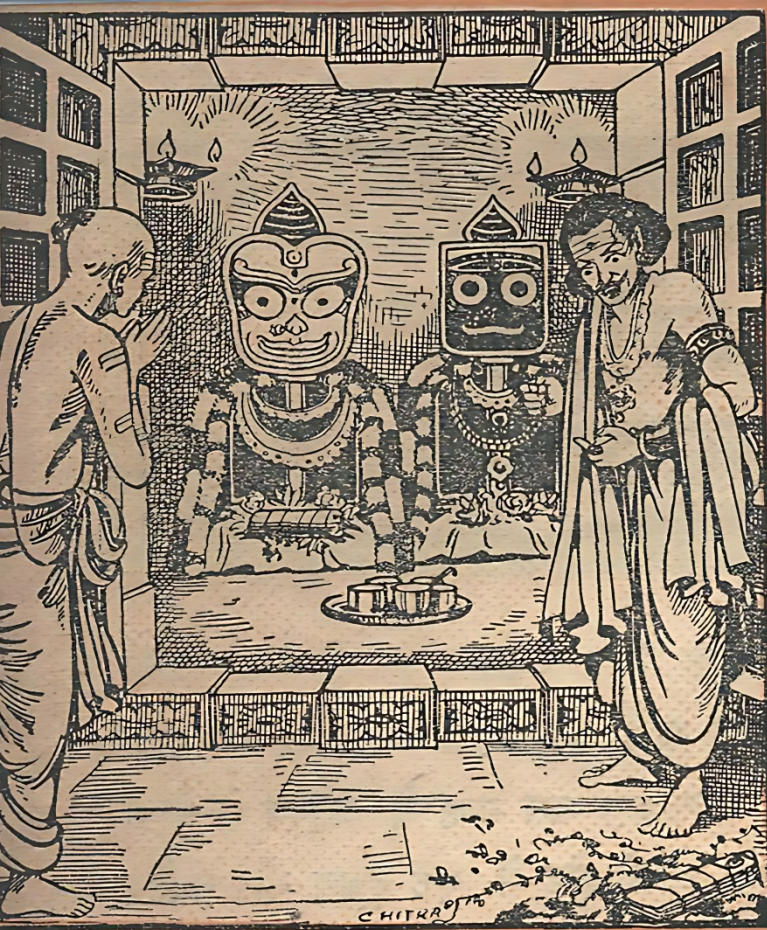
फूसी करते थे। यह सब देख-सुन कर राजा की ईर्ष्या और भी बढ़ गई। वह जल-भुन गया, जैसे कोई जले पर नमक छिड़क दे। अब कुण्डबिल्व जाने वाले लोगों को भी उसने सताना शुरू किया। यह देख कर लोगों को उसके काव्य से घृणा होने लगी। जयदेव के गीत-गोविन्द पर उनका प्रेम और भी बढ़ गया। आखिर राजा ने दोनों ग्रन्थों की परीक्षा करनी चाही। उसको अपनी विद्या का बड़ा गर्व था। उसने एक रात को अपनी किताब और जयदेव की किताब को भगवान जगन्नाथ के चरणों तले रखवा कर पट बन्द करवा दिए। जब सबेरे लोगों ने आकर देखा तो जयदेव का गीत-गोविन्द भगवान के पास पड़ा था और राजा की किताब गर्भ-गृह के बाहर धूल में लोट रही थी। राजा यह अपमान न सह सका। वह शोक और क्षोभ से पागल हो गया और भगवान जगन्नाथ को कोसने लगा।

यह देख कर भगवान प्रत्यक्ष हुए और बोले-"राजा ! मैं जानता हूँ कि तुम्हारी भक्ति कम नहीं है । लेकिन अहङ्कार अच्छा नहीं होता है। ईर्ष्या की आग बुरी होती है। तुम्हारे मन में जलन पैदा हो गई है। इसीलिए तुम्हारी किताब से और तुम से लोगों को घृणा हो गई है ! लेकिन मैं तुम पर कृपा करना चाहता हूँ। जाओ, मैं तुम्हें ऐसा वर देता हूँ कि तुम्हारे गीत-गोविन्द के चौबीस श्लोक पढ़ने के बाद ही जयदेव की किताब लोग पढ़ेंगे।" यह वर देकर भगवान अन्तर्धान हो गए। भगवान के वर के प्रभाव से अब राजा के गीत-गोविन्द के चौबीस श्लोक जयदेव की किताब पढ़ने के पहले ही पढ़े जाने लगे। उस तरह उस राजा का जन्म धन्य हो गया।

सात्यकि के समय में ही जगन्नाथ में एक धनवान ब्राह्मण रहता था। उसकी एक अत्यन्त सुन्दरी लड़की थी। उसका नाम था पद्मावती।

पद्म की सी सुन्दर और बड़ी बड़ी आँखों वाली होने के कारण उस लड़की का नाम पद्मावती रखा गया। माँ-बाप ने उसे बड़े लाड़-प्यार से पाला। वह ब्राह्मण धनवान था। साथ ही वह भगवान कृष्ण का भारी भक्त भी था। जब उसकी लड़की पद्मा बड़ी हुई तो उसकी शादी का सवाल उठा। उस ब्राह्मण ने इसके बारे खूब सोचा-विचारा और निश्चय किया कि पद्मा को मैं भगवान कृष्ण के चरणों में ही अर्पण करूँगा और किसी के साथ ब्याहूँगा नहीं।" पिता ने अपना यह निश्चय सब लोगों को बता दिया। बहुत से लोग पद्मा के रूप पर मुग्ध होकर ब्याह की लालसा से आए। लेकिन ब्राह्मण ने सबको निराश लौटा दिया।

आखिर लोग खुल्लम-खुल्ला कहने लगे-"यह ब्राह्मण सचमुच पागल हो गया है। नहीं तो लड़की का ब्याह भगवान से करने की बात यह कैसे चलाता ? क्या ऐसा भी कहीं हुआ है ?" एक दिन भगवान कृष्ण उस ब्राह्मण के सपने में आए और कहने लगे-"हे ब्राह्मण ! मैं तुम्हारी भक्ति-भावना को देख कर प्रसन्न हूँ। लेकिन तुम मेरी एक बात मानो ! तुम अपनी लड़की का ब्याह मेरे परम भक्त जयदेव से कर दो। मेरी

यही हार्दिक इच्छा है।" कह कर भगवान अदृश्य हो गए। यह स्वप्न होते ही ब्राह्मण का निश्चय बदल गया और उसने शीघ्र ही पद्मावती का ब्याह जयदेव के साथ कर दिया। पद्मा अपने पति को प्यार करती हुई सुख से रहने लगी।

जयदेव इस तरह आनन्द से दिन बिता रहे थे कि एक दिन एक व्यापारी ने उनसे कहा-"भगवन ! कृपा कर एक बार आप हमारे गाँव पधारिए और अपनी चरण-धूलि से हमारा गृह पावन कीजिए। हमें अपना उपदेशामृत पिला कर मुक्ति-पथ का दर्शन कराइए !" इस तरह अनेक प्रकार से

अनुनय-विनय करके वह व्यापारी जयदेव को अपने यहाँ ले गया। वहाँ उसने जयदेव की बहुत आव-भगत की। अनेक सेवा-सत्कार किए। जयदेव के उपदेशों से लोगों ने बहुत लाभ उठाया। इस तरह कुछ दिन बीत जाने पर जयदेव ने व्यापारी से कहा-"मैं अब घर जाऊँगा।" तब उस व्यापारी ने बहुत कुछ खर्च करके एक सुन्दर रथ तैयार करवाया। उस रथ में उसने बहुत सा धन, तरह तरह के हीरे-जवाहर और अनेक प्रकार के उपहार रखवा दिए। फिर विश्वासी नौकरों को साथ कर दिया और चरण-रज ले कर उसने गुरुदेव को विदा किया। थोड़ी दूर जाने के बाद नौकर-चाकरों को, जो जयदेव की रक्षा के लिए साथ आए थे, कुचाल सूझी। उन्होंने आपस में सलाह की और एक निर्जन जगह में जयदेव को रथ से उतार कर उसके हाथ-पैर काट डाले। फिर उन्होंने माल असबाब लूट कर जयदेव को एक कुएँ में डाल दिया और वहाँ से चम्पत हो गए।

कुँए में पानी न था। जयदेव उस कुँए में पड़े-पड़े भगवान का ध्यान करने लगे। भगवान जगन्नाथ के कानों में उसकी पुकार पड़ी और नए हाथ-पैर हो गए। उसी समय क्रौंचक नाम का राजा शिकार खेलने वहाँ आया। उसे कुएँ में से जयदेव की आवाज सुनाई दी। उसने झट कुएँ में झाँक कर देखा कि बात क्या है ? उसमें आदमी को देखते ही तुरन्त उसे बाहर निकलवाया और पूछ-ताछ की कि कुएँ में वह कैसे जा गिरा। भक्त जयदेव नहीं चाहता था कि वह किसी को दण्ड दिलाए। इसलिए उसने कहा कि वैसे ही गिर गया था और इस तरह बात टाल दी। राजा क्रौंचक

जयदेव को अपने राज में ले गया। वह समझ गया था कि ये कोई बड़े ज्ञानी व्यक्ति हैं। उसने बड़ी श्रद्धा से उनको अपना गुरू मान लिया। यों कुछ दिन बीत गए। धीरे-धीरे राजा को मालूम हो गया कि जयदेव भगवान कृष्ण के महान भक्त हैं और भगवान की इन पर पूरी कृपा रहती है। उसने सोचा-"तब ये साक्षात् भगवान ही हैं। मेरे पुण्य-फल से ही इस रूप में मुझे मिल गए हैं।" इसलिए मन-ही-मन उसने निश्चय किया कि अब किसी भी तरह जयदेव को अपने राज से अन्यत्र नहीं जाने देना चाहिए। जयदेव की बातें वह बहुत गौर से सुनता था और उनके उपदेशों के अनुसार चलने की कोशिश करता था। कुछ दिन बाद जयदेव ने अपनी पत्नी पद्मावती को भी अपने पास बुला लिया। उस राज में वे दोनों बड़े सुख से रहने लगे।

एक दिन एक ऐसी घटना घटी जिससे पद्मावती की कड़ी परीक्षा हो गई। रणवास में पद्मावती रानी के साथ बातें कर रही थी कि एक दासी ने आकर रानी से कहा-"देवी! आप के भाई का अचानक देहान्त हो गया। आपकी भौजाई साथ सती हो गई।" यह सुन कर रानी शोक से आकुल हो गई। पद्मावती उनको समझाने-बुझाने लगी। बातों-बात में पद्मावती कह बैठी-"मैं सती होने को अच्छा नहीं समझती हूँ। क्योंकि जो पतिव्रता है उसे सती होने की जरूरत ही नहीं। वह तो पति के वियोग की बात सुनते ही प्राण दे देती है।" यह बात रानी के हृदय में शूल की तरह जाकर चुभ गई। उसने मन में सोचा-"ओहो ! यह ऐसी घमण्डी है ! अच्छा ! इसे एक पाठ पढ़ाना चाहिए।" उस दिन से वह मौके की ताक में रहने लगी।

एक दिन राजा जयदेव को साथ लेकर शिकार खेलने गए। मौका देख कर रानी ने कुचक्र रचा। वह पद्मावती से बातें कर रही थी कि बाहर से एक नौकरानी रोती-पीटती आई और बोली-"देवी ! गजब हो गया ! समाचार आया है कि शिकार खेलते समय अचानक एक बाघ झपटा और जयदेव को उठा ले गया!"

यह बात कान में पड़ते ही पद्मावती के मुँह से एक आह निकली और उसकी आँखें बन्द हो गईं। उसके प्राण-पखेरू उड़ गए। इतने में शिकार खेल कर जयदेव के साथ राजा लौट आया। आते ही यह दुखद वार्ता कानों में पड़ी। उसने सोचा- "यह कैसा अन्याय हुआ ? इस पाप का मूल मैं हूँ।" यह सोच कर उसने राजकुमार को गद्दी पर बिठा दिया और खुद जल मरने की तैयारी करने लगा।

चिता में प्रवेश करने के पहले राजा जयदेव के पास पहुँचा और उसके पैरों पर गिर पड़ा -"देव ! मैं घोर पापी हूँ। आप मुझे क्षमा कीजिए।" यह कह कर उसने पद्मावती के अकाल मरण की बात कह सुनाई। लेकिन जयदेव जरा भी चिन्तित न हुआ। उसने भगवान के सामने जाकर, ध्यान-मग्न हो कर चौबीस अष्टपदियों का गान किया। भगवान प्रसन्न हो गए और पद्मावती उठ खड़ी हुई। "जो इन अष्टपदियों का गान करेंगे वे मुक्त हो जाएँगे।" यह वर देकर भगवान अन्तर्धान हो गए। ये अष्टपदियाँ गीत-गोविन्द में हैं। भक्त-समाजों के बीच आज भी जयदेव के गीत-गोविन्द का बड़ा आदर-मान है। प्रेम और भक्ति के वैसे मधुर गान शायद ही दुनिया की किसी दूसरी भाषा में पाए जाएँ। रसिकों का तो वह कण्ठहार ही है।
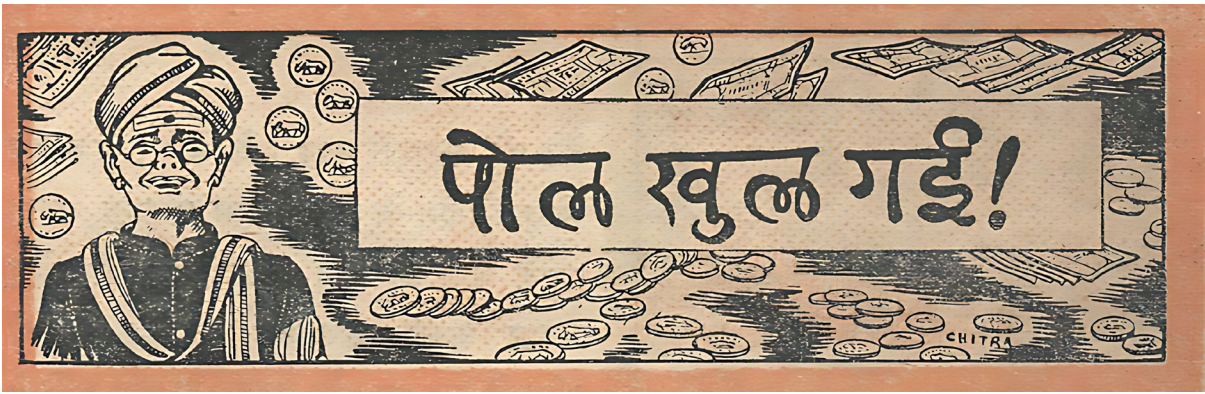
उस जिले में सब से प्रसिद्ध ग्राण्ट-स्कूल था भोलू मास्टर जी का। वह नीलापुर से ढाई कोस की दूरी पर बालू- गाँव में था। ग्राण्ट-स्कूल उसे कहते हैं जिसे सरकार से एक मुश्त मदद मिलती है। हर साल भोलू मास्टर को सरकार से रुपया मिलता था। इसलिए उनकी पाँचों उगलियाँ घी में रहती थीं । जब जब सरकारी अफसर स्कूल का निरीक्षण करना चाहता, तब तब भोलू मास्टर अपना काला कोट पहन लेता, सिर पर पगड़ी रख लेता और बगल में स्कूल के बही-खाते दबा लेता था। फिर तरह तरह के उपाहार और खाने-पीने की चीजें लेकर अपने चेलों-चाटियों के साथ वह तुरन्त नीलापुर जाता। वहाँ जाकर अफसर के दर्शन करके विनय-पूर्वक नमस्कार करता और खाने-पीने की चीजें उनके सामने रख देता। जब अफसर खा-पी चुकते तो कुछ लड़कियाँ आकर उनके गले में मालाएँ डाल देतीं और उनका गुण-गान करने लग जातीं। इससे अफसर का मिजाज नरम पड़ जाता। जब कभी वे लड़कों से कुछ सवाल करते तो लड़के उनके हाथ में कुछ- न कुछ भेंट रख देते। फिर भोलू मास्टर अफसर से कहने लगते-"हुजूर ! यह सब आपकी कृपा का फल है। मैं बहुत पुराना अध्यापक हूँ और सेवा में लगा हुआ हूँ। आज मेरे स्कूल में लड़कों की संख्या २५० है। अभी एक एक दर्जे के कुछ लड़कों को चुन लाया हूँ। आप इनकी परीक्षा करके समझ लीजिए कि बस, सारे स्कूल की परीक्षा हो गई।" यह कह कर वह बगल से बहियाँ निकाल कर अफसर की मेज पर रख देता था। अगर अफसर कहता "मास्टर साहब ! तो हम चलें आप के यहाँ ?" तो भोलू मास्टर झट जवाब देता-"हुजूर ! इसमें हमें क्या उज्र ? लेकिन एक भारी दिक्कत है हुजूर!

सुनन्दा देवी

हमारे गाँव में कोई सवारी नहीं जाती। पाँच मील पैदल ही चलना पड़ता है। रास्ता बहुत ऊबड़-खाबड़ है। जङ्गल-झाड़ियों से जाना पड़ता है। रास्ते में साँप-बिच्छू दीख पड़ते हैं। हम लोग तो आदी हो गए हैं। फिर भी हम उस राह से जाने में बहुत घबराते हैं।" मास्टर लम्बा-चौड़ा वर्णन करके कहते।" "अब ऐसे गाँव में जाकर क्यों आफत में फँसूँ ?" वह अफसर मन में सोचने लगता और वहीं बैठे-बैठे निरीक्षण-बही में मास्टर के स्कूल की तारीफ लिख देता था। इस तरह भोलू मास्टर का स्कूल बहुत मशहूर हो गया और वह गाँव में बैठे बैठे ही सरकारी मदद पाने लगे।

एक बार शिक्षा विभाग के एक अफसर नीलापुर आए। उनके आने की बात मालूम होते ही भोलू मास्टर अपनी आदत के मुताबिक बहियाँ काँख में दाब कर और लड़कों के हाथ डालियाँ सजा कर अफसर के सामने पहुँच गए। वह अफसर उन्हें देखते ही मुसकुरा उठा और बोला-"आइए मास्टर साहब ! आपके स्कूल के बारे में मैंने पिछली रिपोर्टें पढ़ ली हैं। बड़ी खुशी हुई। रिपोर्ट पढ़ने के बाद तो आपका स्कूल देखने के लिए मेरा मन मचल उठा। मैं आपके यहाँ आने ही वाला था कि आप यहाँ आ पहुँचे। अच्छा ही हुआ ! अब आप के साथ ही साथ चलूँगा।" अफसर की बात सुनते ही भोलू मास्टर का मुँह फक हो गया। उनके पैर तले धरती खिसक गई। वह सिर्फ इतना ही बोल सके-"मेरे गाँव आप आ सकेंगे?" पर थोड़ी देर में अपने आप को सम्हाल कर उन्होंने पुराना पाठ पढ़ना शुरू कर दिया कि उनके यहाँ जाने में कैसी कैसी दिक्कतें हैं ! लेकिन उस अफसर ने सब कुछ सुन कर कहा-"मास्टर साहब!आप कुछ फिक्र न कीजिए! मैं भी देहात का रहने वाला हूँ।

मेरे गाँव का रास्ता तो आपके गाँव के रास्ते से भी खराब है। काँटों का चुभ जाना, साँपों का पैरों में लिपट जाना, आदि बातों से तो हमारे यहाँ बच्चे भी नहीं डरते। मुझे तो बचपन से ही पैदल चलने की आदत है।"

उनको इस तरह अपनी जीवन कहानी सुनाते देख कर भोलू मास्टर हक्के-बक्के रह गए। ऐसा मालूम पड़ा कि ये टाले नहीं टलेंगे। इसलिए घबरा कर तुरन्त कहा-"अच्छा ! हुजूर ! अब मैं जाता हूँ। आप पीछे आइएगा।" यह कह कर वे दौड़ते-दौड़ते चले गए। जल्दी जल्दी घर पहुँच कर भोलू मास्टर ने एक सेर चने जोर गरम खरीदा और लड़कों को जमा कर लाने चले। लेकिन तब तक अफसर उस गाँव में आ गए थे। उन्होंने उस गाँव में जाकर पूछ-ताछ की तो पता चला कि उस गाँव में कोई स्कूल है ही नहीं। हाँ, जब कोई अफसर नीलापुर आ जाता है तो मास्टर कुछ लड़कों को मिठाई का लालच देकर वहाँ ले जाकर हाजिर करता है। थोड़ी देर में भोलू मास्टर ने कुछ लड़कों को जमा करके अफसर के सामने ले जाकर कहा-"हुजूर ! आप गुस्सा न होइए ! मेरा स्कूल तो अफसरों की कृपा के कारण चलता आया है। वह दिखाई नहीं देता। इससे क्या ? वह स्कूल है मेरे, लड़कों के और आपके हृदय में ! इस साल मेरी तकदीर अच्छी नहीं मालूम होती। नहीं तो आपको इतना कष्ट क्यों होता ?"
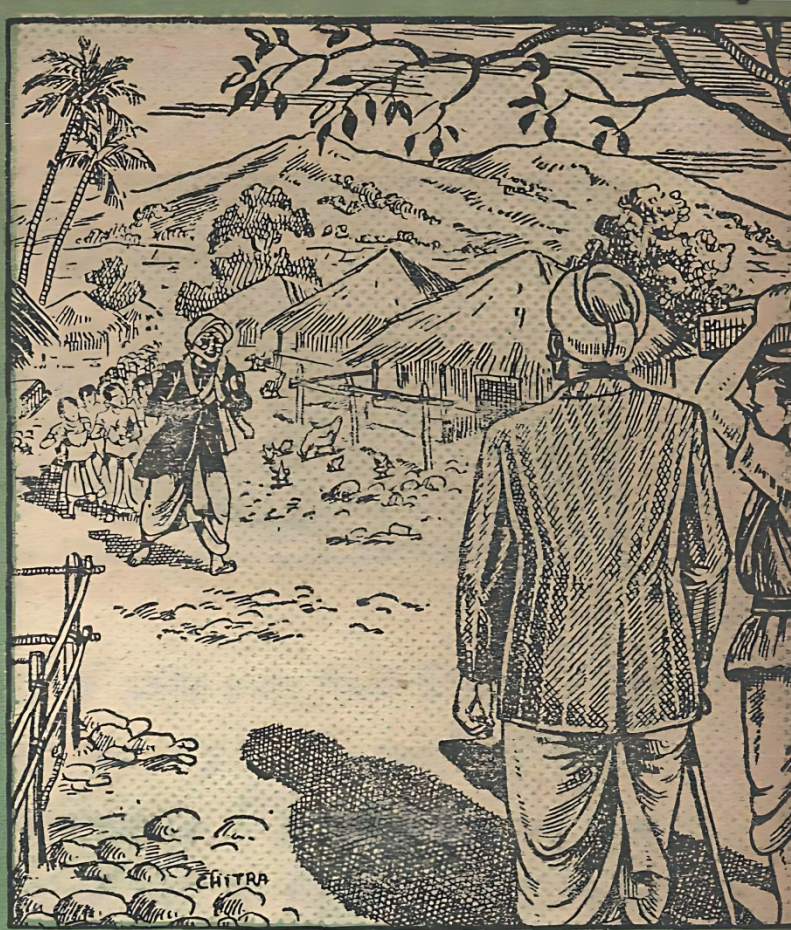
लेकिन अफसर का क्रोध और भी भड़क गया। "हाँ ! सचमुच इतने दिनों आपकी तकदीर अच्छी थी। मैं आपकी पोल आज ही खोलता हूँ और रिपोर्ट लिखता हूँ। जिन अफसरों के अहदीपन से आपको इतना फायदा पहुँचा उनकी भी खबर लूँगा। मुझे अफसोस है तो इस बात का कि आपने इतने लड़कों की पढ़ाई खराब कर दी।" यह कह कर अफसर उलटे पाँव लौट गए ।

पुराने जमाने में किसी समय कलिङ्ग के एक राजा ने घोषणा की-"हम एक ऐसा अपूर्व देवालय अपने राज के कोणार्क नामक प्रदेश में बनवाना चाहते हैं जैसा किसी ने कभी देखा-सुना तक न हो। इसके लिए हम सोलह साल की अवधि देते हैं। जो यह मन्दिर बनाएँगे हम उन्हें एक लाख मुद्राएँ देंगे और एक अच्छी जागीर देंगे। लेकिन अगर वे उक्त अवधि में काम पूरा न कर सकेंगे तो उनका सिर काट कर किले के कंगूरे पर लटका दिया जाएगा।" राजा की उस घोषणा में पशोपेश की कोई गुञ्जाइश न थी। बहुत लोगों ने यह घोषणा सुनी और सुन कर चुप-चाप चले गए। राजा ने जो पुरस्कार देने का वादा किया था उससे लोगों का मन ललचा जाता था। लेकिन काम पूरा न होने पर जो दण्ड निश्चित था उसे पढ़ते ही ललाट पर पसीना निकल आता था।

इसलिए वे लोग चुपचाप अपनी राह चले जाते थे। आखिर भीम नामक शिल्पी के कानों में यह घोषणा पड़ी। भीम कोई मामूली शिल्पी न था। उससे सिर्फ राजे-महाराजे ही काम करा सकते थे। लेकिन वैसा कोई सहारा न मिलने के कारण वह एक छोटे से गाँव में रहता था और बड़ी गरीबी में दिन काटता था। जिस तरह चातक स्वाति की वर्षा की राह देखता रहता है उसी तरह भीम भी मौके की ताक में बैठा हुआ था। राजा की इस घोषणा की बात मालूम होते ही उसकी देह में एक नई फुर्ती आ गई। "भगवान ने मेरे लिए यह अच्छा मौका दिया है। अब मैं संसार को अपनी कारीगरी दिखाऊँगा और राजा से जागीर और पुरस्कार पाऊँगा। इस गरीबी से मेरा पिण्ड छूट जाएगा और मैं सुख से

जीवन बिताऊँगा । इस गरीबी में अगर लाख बरस की भी आयु हो तो क्या फायदा ? जान रही या गई, इस बार मैं अपना भाग्य जरूर आजमाऊँगा।" यह सोच कर भीम अपने मन में फूल उठा। अब उसने जरा भी देर न की। घर के झञ्झट की उसने तनिक भी चिन्ता न की। उसकी स्त्री गर्भिणी थी, पर शिल्पी ने उसकी ओर भी ध्यान न दिया। एक दिन वह चुपके से उठा और राजा के पास जाकर दर्शन करके अपना इरादा जताया। राजा ने कहा-"जल्दी न करो ! पहले अच्छी तरह मन में सोच-विचार लो !"

लेकिन भीम ने कहा-"मैं सब कुछ सोच-विचार कर ही आया हूँ। मेरा यह पक्का निश्चय है।" यह कह कर उसने अपनी प्रतिभा और सामर्थ्य के बारे में राजा को बताया। राजा भी बहुत खुश हुआ। उसने सोचा-"यह अन्य शिल्पियों सा नहीं है। इसे देखने ही से पता चलता है कि यह मेरा मन्दिर बना सकता है। जब मेरा मन्दिर बन जाएगा तो दूर दूर के लोग उसे देखने आएँगे और सोचेंगे-

'ऐसा मन्दिर कहीं नहीं है। धन्य है वह राजा जिसने यह मन्दिर बनवाया है!' इस से बढ़ कर मुझे और क्या चाहिए ?"

जब राजा चाहेगा तो उसे किस चीज़ की कमी होगी ? मन्दिर बनाने के लिए चारों ओर सामग्री जमा की जाने लगी। कई हजार राज लोग आए। लाखों कुलियों के आने से उस जगह कई बस्तियाँ तैयार हो गईं। एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं; पूरे सोलह बरस होते होते राजा का मन्दिर पूरा होने को आया। एक सौ अस्सी गज से भी ज्यादा ऊँचा था वह। वह मन्दिर अन्य मन्दिरों सा नहीं था। उस में विशेषता यह

थी कि वह मन्दिर करीब चौथाई मील तक समुन्दर में घुसा हुआ और सूरज की ओर रुख किए था। यानी सबेरा होते ही बालारुण की कोमल किरणें पहले उस मन्दिर को नहलातीं और पीछे दुनिया पर पड़ती थीं। भीम ने कलश-निर्माण भी कर लिया। केवल उसको मन्दिर पर चढ़ाना बाकी था। कलश को दो सौ गज ऊँचे मन्दिर पर चढ़ाना भी तो कोई आसान काम नहीं था ? शिल्पी भीम और उसके नीचे काम करने वाले हजारों कारीगरों को कोई उपाय न सूझा कि क्या किया जाए ? सोलह साल की अवधि पूरी होने में अब सिर्फ दस दिन ही बाकी रहे थे। दस दिन बीतते कितनी देर लगती ? देखते-देखते नौ दिन बीत गए ! अब सिर्फ एक ही दिन बाकी रह गया। अवधि पूरी होने पर राजा से कृपा की भीख माँगने में कोई फायदा न था। तो क्या शिल्पी भीम के सिर पर भी कँगूरे पर लटकना ही लिखा था ? राज के सब लोग उत्सुकता से देखने लगे कि अब क्या होता है ?

इस तरह सारे राज में भीम के भाग्य पर बहस चल रही थी कि एक सोलह बरस के लड़के ने मन्दिर के पास आकर भीम से कहा-"आर्य ! मुझे मालूम है कि आप कौन हैं। आपके शिल्प की महानता भी मैं जानता हूँ। मुझे यह भी मालूम है कि आप आज किस चिन्ता में डूबे हुए हैं। सारा काम हो गया है। सिर्फ थोड़ी सी कसर रह गई है। सारे राज में आज यही चर्चा चल रही है। अब अफसोस करने से क्या फायदा है ? सोचना तो यह है कि क्या किया जाए ? मैं बालक हूँ। फिर भी इसके लिए भी मुझे एक उपाय सूझ गया है। आप आज्ञा दें तो मैं वह उपाय

बताऊँ ? मेरी हार्दिक इच्छा है कि आपको इस काम में पूरी सफलता मिले।" उस लड़के की बातें सुन कर भीम को बहुत अचरज हुआ। लेकिन उसका मुँह देखते ही उसके हृदय का सारा संशय दूर हो गया। उसके मन में एक नया उत्साह पैदा हुआ और सारी चिन्ता दूर हो गई। उस लड़के ने शिल्पी को वह उपाय बता दिया। भीम उछल पड़ा। झट उसने दो बड़े बड़े मस्तूल मँगाए और उन्हें मन्दिर से टिका कर खड़ा कर दिया। फिर कलश को लोहे की साँकलों से बाँधा और उन साँकलों का दूसरा सिरा मन्दिर पर लोहे के एक गोले से घुसाया। फिर उसने बहुत से आदमियों को साँकल खींचने को लगा दिया। साँकल खिंचते ही कलश उठा और आसानी से मन्दिर पर पहुँच गया। मन्दिर निर्माण का काम पूरा हो गया ! भीम कृतार्थ हो गया। अब उसे कोई खतरा न था। उसने दौड़ कर लड़के को गले से लगा लिया।

सारे राज में उस अपूर्व, अनूप मन्दिर की चर्चा होने लगी। कारीगर खुशी खुशी अपने घर लौटे। उस लड़के को साथ लेकर भीम भी अपने घर चला। रास्ते भर भीम के मुँह से कोई बात न निकली। वह मन ही मन कुछ सोचता चला जा रहा था। वह फिर चिन्ता में डूब गया था।
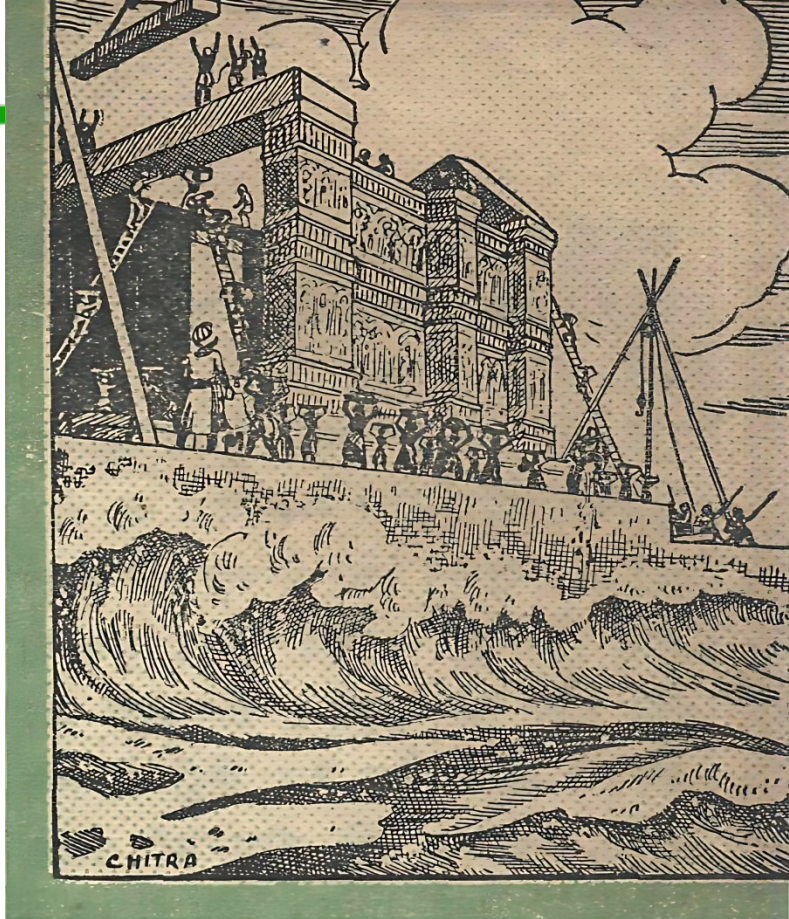
यह देख कर उस लड़के ने सोचा- "यह कैसा आश्चर्य है ! ये क्यों नहीं पूछते कि तुम कौन हो ? कहाँ से आए हो ? क्या ये नहीं सोचते कि मैंने एक बड़े सङ्कट से इन्हें बचाया? अच्छा, जल्दी क्या है ? ये जब पूछेंगे, तभी बताऊँगा।" यह सोच कर वह चुपचाप भीम के पीछे पीछे चलता रहा। भीम चुप्पी साधे हुए था। लेकिन उसके मस्तिष्क में

खलबली मची हुई थी।" इतनी मेहनत उठा कर मैंने सारा काम किया। लेकिन अन्त में इसी लड़के के प्रभाव से वह पूरा हुआ। इसे देखने से पता चलता है कि यह बड़ा बुद्धिमान और होनहार है। अगर यह जीता रहा तो जरूर इस मन्दिर से बड़ा और अपूर्व और एक मन्दिर बनाएगा। ऐसा हुआ तो फिर कौन मुझे पूछेगा ? कौन मुझे याद करेगा ? उससे मेरा नाम मिट्टी में मिल जाएगा। इसलिए इसे जीता नहीं छोड़ना चाहिए।" उसने सोचा। भीम के मन में ज्यों ही यह बुरी नीयत पैदा हुई त्यों ही वह मौका देखने लगा। थोड़ी दूर जाने पर जब निर्जन-प्रदेश आया तो उसने तलवार निकाल कर अचानक लड़के का सिर काट लिया। एक क्षण में यह सब हो गया। तब भीम के मन को चैन हुआ। वह शान्त चित्त से घर पहुँचा। घर जाकर उसने देखा कि उसकी स्त्री वहाँ आ गई है। "तुम कब आ गईं ? मुझे खबर क्यों न भेजी ?" उसने पूछा। लेकिन उसकी स्त्री ने जैसे यह नहीं सुना। "लड़का कहाँ है ?" उसने उतावली से पूछा। "लड़का कौन ? कैसा लड़का ?" भीम ने कलेजा थाम कर पूछा। "यह क्या ? आपने अपने लड़के को नहीं पहचाना ? हमारा लड़का ही तो आपको कलश चढ़ाने का उपाय बताने आया था ! क्या वह आपके पास नहीं पहुँचा ?" उसकी स्त्री ने घबरा कर पूछा। यह सुनते ही भीम के मुँह से एक भयंकर चीख निकली-"अरे ! तो क्या वह मेरा ही लड़का था ? हाय ! तो क्या मैंने अपने लड़के का ही सिर काट डाला ? ईर्ष्या ! सत्यानाशिनी ! तूने मुझे नष्ट कर डाला !"

यह कह कर भीम धड़ाम से पृथ्वी पर गिरा और पछाड़ खाकर सदा के लिए सो गया ! सचमुच ईर्ष्या वह आग है जिससे अपना ही घर जल जाता है।
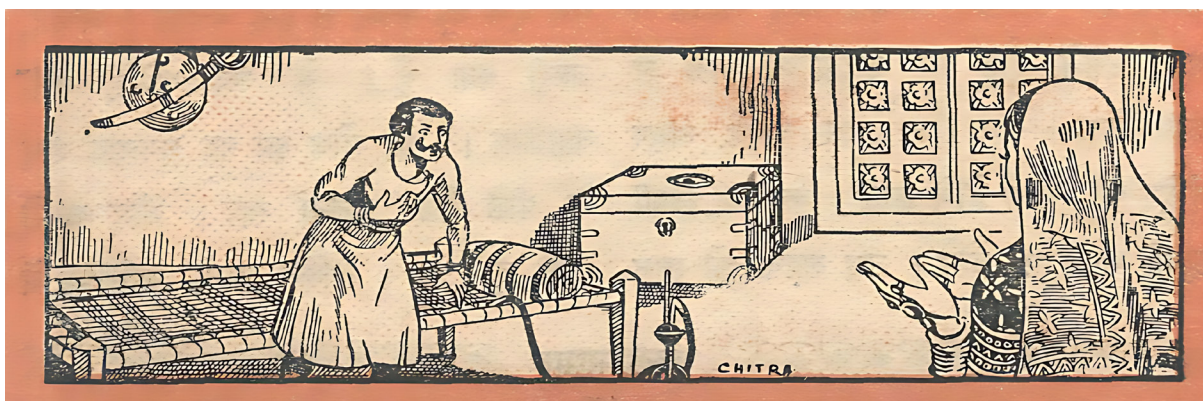
कहते हैं कि किसी राजा की एक फुलवारी थी और उस फुलवारी में चहकती रहती थी एक बुलबुल। जब बहार आई तो सारी फुलवारी खिल उठी। एक एक लता लहरा उठी। हर पेड़ में कोंपलें निकलने लगीं। सुगन्ध से भर कर हवा भी मस्त हो उठी। बस, बुलबुल चहक उठती और पेड़ पेड़ पर फुदकती फिरती थी। उसकी चहक से सारा बाग गूँज उठता था । एक दिन अचानक न जाने, कहाँ से और एक बुलबुल वहाँ आ गई और फुलवारी में चहकने लगी। वह बाग उसे ऐसा अच्छा लगा कि वह मुग्ध हो गई और सोचने लगी-"अहा अब यहीं रम जाऊँ।" वह एक आम की डाल पर बैठ कर गाने लगी। उसे देख कर अपने बुलबुल ने सोचा कि उसके साथ गला मिलाकर गाएँ। इसलिए वह भी उसकी बगल में जा बैठी और गाने लगी। दोनों में धीरे धीरे दोस्ती हो गई और दोनों मिल कर बाग़ में घूमने-फिरने लगीं। एक दिन अपने बुलबुल ने साथिन से कहा-"मुझसे ब्याह कर लो !" तब उसने जवाब दिया-"कल सबेरा होने के पहले ही तुम मुझे एक ऐसा नया फूल ला दो, जिसे मैंने कभी नहीं देखा हो। तब मैं तुमसे ब्याह कर लूँगी।"

तब बुलबुल अपना गाना छोड़ कर, हरेक बेल-लता के पास जाकर पूछने लगी-"क्या तुम मुझे एक नया फूल दोगी ?" लेकिन उन्होंने जवाब दिया-"हमारे फूल तो सभी पुराने हैं। हम नहीं जानतीं कि नए फूल कैसे फूलें।" रात भर फुलवारियों में भटक कर निराश बुलबुल आखिर एक कँटीली झाड़ी पर बैठ गई और आँसू बहाने लगी। तब उस झाड़ी ने पूछा-"प्यारी बुलबुल ! क्यों इस तरह आँसू बहा

रही हो ?" "अरे ! फलने-फूलने वाली सब लताओं ने तो जवाब दे दिया ! अब तुम मेरा हाल पूछ कर क्या करोगी ?" बुलबुल ने कहा और फिर आँसू बहाने लगी। लेकिन जब झाड़ी ने हठ किया तो बुलबुल ने सारा किस्सा उससे कह सुनाया। सुन कर झाड़ी ने कहा -"अरे ! इतनी सी बात पर आँसू बहाती हो ? सुनो, आज पूनम है। चाँद निकल रहा है ! तुम मेरे ऊपर सट कर बैठो और मेरे काँटों की तनिक भी परवाह न करके, अपने गले की सारी मिठास खर्च करके सबेरे तक गाती रहो। फिर तुम देखना, मैं तुम्हें कैसा अपूर्व कुसुम देती हूँ ?"

बुलबुल ने खुशी से उसकी बात मान ली। वह झाड़ी पर सट कर बैठ गई और गाने लगी। चारों ओर अमृत बरसने लगा। काँटों ने बुलबुल की रेशम सी मुलायम देह को छेद डाला। खून बहने लगा। लेकिन उसने कुछ भी परवाह न की। वह और भी एकाग्र होकर गाने लगी। आखिर वह गाना सुन कर कँटीली झाड़ी का कठोर हृदय भी फट गया। उसकी डालियों पर कलियाँ चटक चलीं। हरेक कली पर बुलबुल का खून बह कर रङ्गने लगा। हरेक कली में बुलबुल के गले की मिठास और चाँदनी की कोमल कान्ति मिल गई।

सबेरा जब हुआ तो उस कँटीली झाड़ी पर अपूर्व, अरुण पुष्प खिल रहे थे। उस फूल को देख कर बुलबुल को बहुत खुशी हुई। उसने फूल तोड़ ले जाकर अपनी साथिन को भेंट किया। फिर दोनों ब्याह कर सुख से रहने लगे। उस दिन से बुलबुल हर रात को गाती रहती है। और उस कँटीली झाड़ी का नाम क्या है, जानते हो ? गुलाब !

CHANDAMAMA (HINDI) OCTOBER 1951 REGD. NO. M. 5452

रङ्ग भरो (कहानी) चित्र ३